UG-II Sem (1)
18 April

परम्परागत साधन छिन जाते हैं, जमीन गिरवी रखनी पड़ती है अथवा उच्च समाज के किसी सदस्य के यहाँ उसे बन्धक मजदूरी स्वीकार करनी पड़ती है। दूसरे शब्दों में, वह अपने श्रम का भी मालिक नहीं रह जाता। ऋणी परिवार की स्त्री सदस्य को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करने में उसके मालिक अथवा अंचल के किसी तगड़े आदमी की रुचि हो जाती है। ऋण की वसूली का तकाजा तेज होने लगता है। फिर उस स्त्री के विवाह-विच्छेद की औपचारिकता पूरी की जाती है और फर्जी तौर पर दूसरा विवाह भी रचाया जा सकता है। इस पूरी जालसाजी में खुमड़ी के मुखिया भी धन के लालच में सक्रिय सहयोग देते हैं। अन्त में स्त्री अकेली, या अपने असली या फर्जी परिवार के साथ वेश्यावृत्ति के लिए मैदानी इलाकों में चली जाती है।"[6] अपने मूल्यों में आस्था खोया जनजाति का यह निचला वर्ग कभी-कभी खुद भी स्त्री को इस दिशा में प्रेरित कर देता है और वेश्यावृत्ति स्वयं में एक आदरणीय अथवा वांछनीय व्यवसाय के रूप में स्वीकृति प्राप्त कर लेती है।

जनजाति के लोग कहीं-कहीं स्त्री के इस प्रकार फँसाए जाने के विरुद्ध बड़ा रोष भी व्यक्त करते हैं, विशेषत: युवा वर्ग इसका प्रतिशोध भी लेना चाहता है। परन्तु परम्परागत न्याय व्यवस्था को वह ऐसे अपकारी व्यक्ति पर लागू नहीं कर सकता और नई व्यवस्था या तो उसकी पहुँच से बाहर है या ऐसे अपराधों के लिए जिम्मेदार सबल व्यक्ति दण्ड से बच निकलते हैं।

इस समस्या के सम्बन्ध में हम यह स्पष्ट कर देना चाहेंगे कि अधिकांशत: स्त्री के शोषण या वेश्यावृत्ति के मामले जनजाति के सबसे निम्न और कमजोर श्रेणियों की महिलाओं में घटित होते हैं। उच्च और समर्थ श्रेणियों की महिलाओं के साथ ऐसी घटनाएँ अपवाद ही हैं। ऐसा लगता है कि मानव का वर्ग भेद का इतिहास यहाँ भी अपने को दोहराता है और निर्बल वर्ग ही सबल वर्ग द्वारा हर प्रकार के शोषण का शिकार होता है। इसलिए इस समस्या का समाधान तभी हो सकता है जब इस निम्न वर्ग को रोजगार के अवसर दिए जाएँ और उन्हें ऋणग्रस्तता के चंगुल से बचाया जाए। इसके अतिरिक्त, ऐसी घटनाओं की रोकथाम और दण्ड की कानूनी प्रक्रिया में उचित संशोधन किए जाएँ।

स्त्रियों का यौन शोषण ही उनकी सामाजिक प्रस्थिति में ह्रास का एकमात्र कारण नहीं है बल्कि बाह्य सम्पर्कों के प्रभाव में आकर जो उन पर नई सामाजिक नैतिकता लादी जा रही है, वह भी उनकी परम्परागत प्रस्थिति में ह्रास का कारण है। उदाहरणार्थ, वे अब पुरुषों के साथ नृत्य आदि में भाग नहीं लेतीं अथवा उनमें पर्दे का समावेश होने लगा है। यदि उनका कार्य-क्षेत्र घर और रसोई तक ही सीमित किया जाने लगे तो स्वाभाविक ही हिन्दू स्त्रियों की भाँति उनकी सामाजिक प्रस्थिति भी पुरुषों की तुलना में नीची हो जानी है। यहाँ हम यह भी कहना चाहेंगे कि यौन नैतिकता में अत्यधिक शिथिलता या तलाकों की दर अधिक होना या ऊँचे वधू-मूल्य होना जैसी कुछ चीजें ऐसी भी हैं जिनमें धीरे-धीरे परिवर्तन वांछनीय ही होगा।

(XI) नशावृत्ति (Alcoholism)—मद्यपान यद्यपि जनजातियों में सामान्य जीवन का एक अंग रहा है तथापि आधुनिक आबकारी कानून के अन्तर्गत दृश्य कुछ बदल गया है। पहले वे अपने घरों में ही परम्परागत तरीकों से स्थानीय चीजों; जैसे मँडुआ से शराब निकालते थे और प्रथा के अनुसार नियमित मात्रा में लेते थे। परन्तु अब घरों में शराब खींचना गैर-कानूनी है। शराब उन्हें ठेकों पर मिलती है। शराब के ठेकेदार एक नया शोषक तत्त्व बन जाता है और धीरे-धीरे आदिवासी इस शराब के आदी बन जाते हैं तथा शराब के लिए या शराब के प्रभाव में वे अनेक गलत कार्य करने के लिए भी तैयार हो जाते हैं।

इस समस्या के सम्बन्ध में हम यही सुझाव देंगे कि आबकारी के नियमों में संशोधन किया जाए। आदिवासी क्षेत्रों से शराब के ठेके हटाए जाएँ। जनजातियों को पूर्ववत् इस दिशा में अपने

6. डॉ॰ ब्रह्मदेव शर्मा, आदिवासी विकास, पृष्ठ 82.

(2)

जीवन को नियन्त्रित करने का अधिकार मिले। हमें यह जानकारी मिली है कि उत्तर प्रदेश की 'भोटिया' जनजाति के कई गाँवों में स्त्रियों ने शराबखोरी के विरुद्ध जबरदस्त आन्दोलन छेड़ा, ठेकों का घेराव किया, उनकी बोतलें तोड़ी, वहाँ प्रदर्शन किए और अपने अभियान में काफी सीमा तक सफलता भी प्राप्त की है।

(XII) अपराध व कानून सम्बन्धी समस्याएँ (Problems related to crime and law)—कुछ जनजातियाँ अंग्रेजी शासनकाल से ही अपराधी जनजातियाँ मानी जाती थीं। चोरी, ठगी और डकैती करना जिनका व्यवसाय बन गया था। उत्तर प्रदेश की 'बवरिया' जनजाति ऐसी ही भूतपूर्व अपराधी जनजाति है। उनके पुनर्वास का प्रयास किया जा रहा है। लेकिन दु:ख इस बात का है कि अनेक जनजातियाँ कानून का उल्लंघन करने के लिए बाध्य हो गई हैं क्योंकि उनके जीवन निर्वाह के परम्परागत साधन उनसे छिन गए हैं। **ब्रह्मदेव शर्मा** के शब्दों में, "ह्रासशील संसाधन, धनुष और बाण की सतत परम्परा और बढ़ती हुई आबादी ने कुछ आत्यन्तिक स्थितियों को जन्म दिया है जिनके कारण जीवन-धारण के लिए आदिवासियों को लूटमार के लिए बाध्य होना पड़ा।"[7] उन्होंने भीलों का उदाहरण दिया है जो चोरी को पाप समझते हैं और अपने भरण-पोषण के लिए बाहुबल का प्रयोग करना अनिवार्य समझते हैं। इसलिए वे भारी जोखिम उठाकर भी डकैती डालते हैं। झाबुआ के अली-राजपुर क्षेत्र में राहजनी एक आम बात हो गई है। इसी प्रकार, कुछ अंचलों में गैर-कानूनी ढंग से जलाऊ अथवा बहुमूल्य लकड़ी काटकर बेचना आदिवासियों का धन्धा बन गया है। ऐसे मामलों में उच्च समाज के भ्रष्ट अधिकारियों और अपराधी तत्त्वों के साथ ऐसे आदिवासियों का गठबन्धन हो जाता है जो उन्हें अपराधों के लिए प्रेरित करते हैं।

स्पष्ट है कि यह समस्या जीवन के निर्वाह की समस्या के साथ जुड़ी हुई है। इसलिए जैसा कि पहले भी कहा गया है; रोजगार के नए अवसर, गृह व कुटीर उद्योग, वनों के नियमों में परिवर्तन से ही इस बीमारी का इलाज हो सकता है।

(XIII) जनजातीय विद्रोह (Tribal revolts)—अन्तिम रूप से, जनजाति आक्रोश और विद्रोह को भी हम एक समस्या के रूप में वर्णित करना चाहेंगे। वास्तव में, जनजातियों की समस्याएँ सांस्कृतिक संकट, आर्थिक बेरोजगारी और शोषण की समस्याएँ हैं। जब कोई जनजाति इसके कारण समझने में या उचित निदान खोजने में असफल और हताश हो जाती है तो अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए वह विद्रोह का रास्ता अपना लेती है। नागा और मिजो, टुण्ड्रा, सन्थाल गोंड और भील जनजातियों में विद्रोह का लम्बा इतिहास है. सबसे नवीनतम क्रान्ति नक्सलपन्थी क्रान्ति थी जो पश्चिम बंगाल के आदिवासियों में शुरू हुई। इसके प्रेरक कट्टर मार्क्सवादी कम्युनिस्ट थे जिनका विश्वास था कि क्रान्ति बन्दूक की नली से ही होती है। यह क्रान्ति भारत के अनेक गाँवों एवं नगरों में पहुँची। यद्यपि यह सच है कि भारतीय प्रशासन इस क्रान्ति को कुचलने में सफल रहा है तथापि इसने यह सिद्ध कर दिया है कि शोषण से उत्पन्न आक्रोश बारूद के समान है जो किसी भी चिंगारी से विस्फोट में बदल सकता है।

स्पष्ट है कि यह समस्या अन्य समस्त समस्याओं का प्रतिफल है और इसका हल पुलिस व सेना की गोलियाँ नहीं है बल्कि जनजाति की समस्याओं और आकांक्षाओं को सही परिवेश में समझने और उसके निराकरण में है। यह निराकरण विकास की उन योजनाओं में निहित है जिनके निर्माण एवं क्रियान्वयन में जनजाति स्वयं अपनी भागीदारी की अनुभूति कर सके। इसका दायित्व न केवल हमारे राजनेताओं, प्रशासकों और सामाजिक कार्यवर्ताओं पर है बल्कि मार्गदर्शन का कार्य मानवशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों पर भी है।

Stop End Chapter

7. डॉ॰ ब्रह्मदेव शर्मा, पूर्व उद्धृत, पृष्ठ 227.

Scanned with CamScanner